अनामिका की कविता : स्त्रियाँ, बेजगह, तुलसी का झोला

M.A.कोर्स के लिए डॉ. बंदना झा द्वारा लिखित

अनामिका समकालीन हिंदी कविता की सशक्त हस्ताक्षर हैं। अब तक उनके 'अनुष्टुप', 'गलत पते की चिट्ठी', 'बीजाक्षर', 'खुरदुरी हथेलियाँ', 'अब भी वसंत को तुम्हारी जरुरत है', 'दूब –धान' जैसे काव्य संग्रह के अतिरिक्त तीन उपन्यास तथा एक कहानी संग्रह भी हैं । अनूदित रचनाओं का संग्रह 'तीस तक' शीर्षक से है। अनेकानेक पुरस्कारों से सम्मानित, चर्चित कवियत्री अनामिका के काव्य संसार को इस अध्याय में समझने का प्रयास करेंगे ।

1. उद्देश्य कथन
2. प्रस्तावना
3. स्त्रियाँ
4. बेजगह
5. तुलसी का झोला
6. निष्कर्ष
7. अभ्यास प्रश्न
8. सहायक पुस्तक सूची

स्त्रियाँ , बेजगह, तुलसी का झोला

1. उद्देश्य कथन

कविता मानव मन की अभिव्यक्ति है । अनादिकाल से मानव का हर्षित , व्यथित , कातर , सुखी मन भावावेग के क्षणों में गा उठता है । कृत्रिमता उस गान से , गीत से कोसों दूर रहती है , वह चरम क्षण में अपने निविड़ रूप , प्राकृतिक रूप में होती है । यह प्राकृतिक चेतना सृजन के मिट्टी –पानी से बनी होती है । मानव बिना लाग –लपेट के जीवन के सत्य को गा उठता है ।

कविता के इतिहास में देखा जाय तो ईश्वर की वंदना से लेकर प्रकृति के विभिन्न रूपों का गान उसके विषय रहे । राग-विराग , संयोग –वियोग , युद्ध –शांति सब का भाव कविता का भाव बने ।लेकिन बाद की सदी में जब अन्वीक्षण की प्रक्रिया शुरू हुई तो पाया गया सब कुछ है पर स्त्री नेपथ्य में है । स्त्री की बनायीं हुई दुनिया है पर उसके व्याख्याकार पुरुष हैं । स्त्री , स्त्री के विषय , स्त्री की भाषा , चिंतन , आलोचना लुप्त है । जो कहीं दृश्य भी है तो अदृश्य की भांति ओट में है ।

स्त्री ऋषिकाओं के रूप में प्रकट हुई लेकिन फिर लंबे समय बाद रसोकाल में उद्बोधन के लिए युद्ध के मैदान में प्रकट हुईं । रीतिकाल ने वर्ण्य – विषय बनाया लेकिन वह मौन रही । भारत के स्वतंत्रता आंदोलनों में उसकी भागीदारी रही लेकिन उसकी 'नोटिस' कम की गयी । अभिलेखन में भी उसके अवदान को सुरक्षित नहीं किया गया ।

भारतीय स्त्री ने स्वयं को संबंधों के ही परिप्रेक्ष्य में देखा अतएव वह नेपथ्य में भी रहते हुए आंदोलित नहीं हुईं । भक्ति और संबंधों के ताने-बाने उसने स्व को विसर्जित किया । फलतः उसका 'स्व' कभी उभर कर सामने नहीं आया ।

इक्कीसवी सदी में उसने अपनी भूमिका को परिवर्तित किया । भूमिका परिवर्तन के अनेक कारण थे – भौतिकता , उत्पादन , औद्योगिक क्रान्ति , आधुनिकता , औपनिवेशिकता , हिंसा , तनाव , अकेलापन, मूल्यों का क्षरण आदि तमाम ऐसे विषय थे जिसकी कसौटी पर बार –बार उसे कसा गया । फलतः उसने अपनी उपस्थिति को कविता के माध्यम से पुरुषवादी , अहंवादी , मर्दवादी , सत्ता के सम्मुख स्वर दिया । उसने अपनी भाषा , बिंब , लय का निर्माण किया । जेंडर आधारित संरचना को चुनौती दी । शोषण के पुरुषवादी व्याख्या को उसने पारिस्थितिक व्याख्या से समझाने कोशिश की । हर क्रूरता , अमानवीयता , शोषण के कारण मातृशक्ति के क्षरण के खिलाफ़ इक्कीसवी सदी की स्त्री –कविता खड़ी है । उसकी कविता वैचारिक संघर्ष , सामाजिक जिम्मेदारी के बोध और लैंगिक राजनीति के शोषण के विरुद्ध उठ खड़ी हुई है ।

आज की स्त्री कविता सिर्फ अपनी बात नहीं करती वरन विभिन्न अस्मिताओं के संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती है । ध्यान से देखा जाय तो स्त्री-कविता का पक्ष लोकतान्त्रिक पक्ष का अनुमोदन करता है । जाति , धर्म , संस्कृति, सामाजिक संरचना निर्मित छवि से बाहर प्रेम, प्रकृति , प्रोद्योगिकी की नई व्याख्या है जिसमें वह किसी करिश्मे की बात नहीं करती बल्कि करती बल्कि श्रम और परिवार से लेकर सामाजिक सरोकार में स्वयं की छवियों को परखती है ।

हिन्दी की दो विधाओं में से महत्वपूर्ण पद्य विधा के अन्तर्गत कविता नामक विधा का जन्म होता है। आधुनिक काल 1850 से हिन्दी साहित्य के इस युग में भारत में राष्ट्रीयता के बीज अंकुरित होने लगे थे। स्वतन्त्रता संग्राम लड़ा और जीता गया। छापेखाने का आविष्कार हुआ, आवागमन के साधन आम आदमी के जीवन का हिस्सा बनें। जनसंचार के विभिन्न वस्तुओं का निर्माण हुआ। टी0बी0, रेडियो, व समाचार पत्र हर घर का हिस्सा बना और शिक्षा हर व्यक्ति का मौलिक अधिकार । इन सब परिस्थितियों का प्रभाव हिंदी साहित्य पर आनवार्यतः पड़ा। आधुनिक काल का हिन्दी पद्य साहित्य पिछली सदी में विकास के अनेक पड़ावों से गुजरा। जिसमे अनेक विचार धाराओं का बहुत तेजी से विकास हुआ। जहाँ

काव्य में इसे छायावादी युग, प्रगतिवादी युग, प्रयोगवादी युग, नयी कविता युग और साठोत्तरी कविता, समकालीन कविता इन नामों से जाना गया समकालीन कवयित्री अनामिका के तीन कविताओं 'स्त्रियाँ', 'बेजगह' एवं 'तुलसी का झोला' को पढ़ने के बाद आप -

- आधुनिक हिन्दी कविता के नव सामाजिक विमर्श से परिचित हो पाएंगे।
- अनामिका के कविता संबंधी अवधारणा को जान पाएंगे।
- अनामिका की कविता से अन्य कविताओं की तुलना कर सकेंगे।
- साथ ही समकालीन कविता पर आप प्रकाश डाल पाएंगे।

2. प्रस्तावना-

हिन्दी पद्य विधाओं में कविता सबसे सशक्त विधा बनकर विकसित हुई है। आज कविता के पाठक अन्य सभी विधाओं की तुलना में सर्वाधिक है। हर आधुनिक भाषा में कविता लिखी जा रही है। यही कारण है कि पत्र, पत्रिकाएं कविताओं से अटा पड़ा दिखाई देता है। विगत 1850 से हिन्दी कविता ने जो आशातीत प्रगति की है वह उत्साहवर्धक है। ये सत्य है कि हिन्दी कविता अमीर खुसरो, विद्या पति, कबीर, जायसी, सूरदास, तुलसीदास, मीरा भूषण, मतिराम, पद्माकर के यहाँ भी सुशोभित हुई है। आधुनिक काल में भी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा इत्यादि कविता की श्रीवृद्धि करते हैं। परन्तु जैसे-जैसे कविता का विकास होता है वैसे-वैसे कविता अपने नए रूप में ढलती जाती है। छन्दबद्ध कविताओं की तरफ से आधुनिक कवियों का मोह भंग दिखाई देने लगता है। यही कारण है कि सबसे पहली छंद मुक्त कविता ' जूही की कली ' लिखी जाती है। उसके बाद मुक्त छन्द में कविताई करने वालों की बाढ़ सी आ गयी है हिन्दी जगत में। अनामिका की कविता शैली भी मुक्त छंद की ही है। जीवन के सहज प्रसंगों से भाव ग्रहण करती है । ' लोक में स्त्री ' उनकी कविता का चिंतन है । इतिहास के प्रचलित प्रसंगों से वह विषय जरूर लेती हैं लेकिन घर आंगन के मध्य उसकी समीक्षा करती है । आर्थिक आधार पर वह स्त्री की उपस्थिति को विश्लेषित नहीं करती बल्कि मनुष्यता का बोध वे आवश्यक मानती हैं । सृष्टि को लय में बाँधने की शक्ति स्त्री में है इसलिए सृष्टि को लयात्मक बनाये रखने के लिए समाज की संरचना और सोच को बदलने की आवश्यकता पर अनामिका बल देती है । बिना किसी परचम या नारे घरेलू बिम्ब के माध्यम से पुरुषवादी छवि को बदलने का आग्रह उनकी कविता है ।

मदन कश्यप के अनुसार, "अनामिका हिन्दी की ऐसी पहली स्त्री कवि हैं, जिन्होंने अन्तर्वस्तु से आगे बढ़कर भाषा, शिल्प, सौन्दर्य और आस्वाद के स्तर पर कविता को एक नया धरातल दिया है। स्त्री का अपना धरातल इसके लिये उन्हें लम्बा संघर्ष करना पड़ा क्योंकि अंतर्वस्तु मे बदलाव तो आसान होता है मगर सौन्दर्य बोध और आस्वाद को बदलना बहुत कठिन और इसे स्वीकृति दिलाना भी कठिन ।

अनामिका अपनी कविताओं में बीच-बीच में शब्दों से खेलती हैं, वे गपशप की शैली अपनाती है और दादी की कहानियों की तरह भूमिका बाँधती नजर आती है। यह बतकही की अपनी स्त्रीशैली है जिसके सौन्दर्य को पुरुषों के प्रतिमान पर नहीं आँका जा सकता। इसके लिये स्त्रियों के जीवन और कहन-शैली को परखना होगा। तभी इस स्त्री के भाषा की खूबसूरती समझ में आएगी। अनामिका की एक कविता में जेठ की दुपहरी का चित्र है। मगर इसकी विशेषता यह है कि सभी बिम्ब सारे उपमान स्त्री के सक्रिय जीवन से लिय गये हैं। बच्चों की चानी तेल स्त्रियाँ ही थोपती हैं और मनिहारिनें ही घर के अन्दर जाकर गृहणियों तक जरूरी सामान, खासकर सौन्दर्य प्रसाधन बेंचती है। यह हिन्दी कविता का नया लोक है। इसका आस्वादन या पाठ स्त्री जीवन के पाठ के साथ ही सम्भव है। गौरतलब है कि अनामिका भाषा, शिल्प और काव्य सौन्दर्य के स्तर पर ही नहीं, अंतर्वस्तु और अनुभूति के स्तर पर भी नयी चुनौतियाँ पेश करती है। 'मौनदासी' एक भयावह यथार्थ से परिचित कराती है तो 'बेजगह' अनुभूति के उस स्तर पर जा कर लिखी गयी है, जहाँ तक किसी पुरुष के लिये पहुँचना सम्भव ही नहीं है। हम उससे सहमत या असहमत हो सकते हैं, मगर दोनों ही

स्थितियों में उसे महसूस नहीं कर सकते । इस तरह अन्तर्वस्तु-संवेदना और सौन्दर्य तीनों ही स्तर पर उनकी कविता नयी चुनौतियाँ पेश करती है।" प्रो0 अवधेश नारायण मिश्र के अनुसार, "अनामिका की भाषा अमावट की जमावट की तरह है।"

3.7 स्त्रियाँ-

'स्त्रियाँ' कविता में अनामिका क्रियात्मक बोध के बरक्स स्त्री के वजूद को तलाशती हैं । इस कविता में पढ़ना, देखना और सुनना तीन क्रियाओं के प्रयोग द्वारा समाज कि उस चेतना को परखा गया है जिसके माध्यम से वे स्त्री को पढ़ते, देखते और सुनते हैं । और इतना ही नहीं भोगने की व्यथा की कथा भी अनामिका लिखती हैं । अनामिका ' स्त्रियाँ' कविता में आस पास की सरल सी दिखने वाली चीजों से स्वयं अर्थात् स्त्री की तुलना करती हैं । चनाजोर गरम के लिफाफे बनाने के पहले बच्चों की फटी कॉपियों से उसके वजूद को परखा जाता है। उनींदे आंखों से जैसे सुबह सुबह अनमने मन से अलार्म घड़ी देखी जाती है ठीक स्त्रियों को भी गैर जरूरी चीजों की तरह देखा और समझा जाता है। अनामिका दैनंदिन जीवन के बेहद सरल सी चीजों से स्त्री के वजूद को पर्याय की तरह प्रयोग करती है। वह बिम्ब भी परिष्कृत नहीं साधारण सा है । महानगरी या नगरीय भी नहीं बिल्कुल कस्बाई। सस्ते कैसेटों को जैसे ठसाठस बस में उड़ते मन से सुना जाता है जिसमें फिल्मी गानों का सुरीलापन नष्ट हो जाता है, रेकॉर्ड घिसे हुए प्रतीत होते हैं । एक बेजान सी आवाज हवा में जिस तरह से तारी होती है ठीक उसी तरह समाज में स्त्रियों का होना है। उनके होने को भी बेज़रुरत की चीज समझना समाज की उस समझ को व्याख्यायित करता है जिसमें स्त्रियाँ रहती हैं।

अनामिका की कविता भाषा सहजता का बोध कराती हैं। सादगीपूर्ण भाषा में स्त्री-विषयक विमर्श को वे नया खेत-खलिहान देती हैं। उधार के चिंतन से विमर्श का आस्वाद उनका लक्ष्य नहीं हैं।

वे कविता में स्त्रियों की तरफ से आवाज उठाती हैं। सुघड़ता से समझने के लिए अनामिका 'नौकरी के पहले विज्ञापन' की तरह ध्यान से पढ़ने और समझने वाली दृष्टि को आवश्यक मानती हैं। सुघड़ दृष्टि चाहिए स्त्री को पढ़ने के लिए। 'ठिठुरते ठंड में जैसे दूर जलती आग' की आवश्यकता प्रतीत होती है ठीक उसी तरह बेहद जरूरी आग की तरह उनकी तपिश को देखने की कोशिश की जाए। 'अनहद' का नाद जैसे संपूर्ण दिगन्त में व्याप्त है उसी नाद की तरह स्त्रियों के होने की संपूर्णता को सुना जाय। नयी सीखी हुई भाषा जैसे हमसे बेहद ध्यान से उसे सुनने की आग्रह करती है ठीक उसी तरह उन्हें भी सुना और समझा जाय।

इस पूरी कविता में स्त्री-लेखन और उसके माध्यम से स्त्री-जीवन के संघर्ष को समझने के नए दृष्टि-विस्तार को अनामिका आवश्यक समझती हैं। इस कविता में वे उस ओर भी इशारा करना नहीं भूलती जहाँ महिलाएँ अपनी उपस्थिति की प्रतिष्थापना में दूसरे के समझ कनखी, इशारे और कनखी से विशेषीकृत हो व्याख्यायित होती है। पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियाँ मर्दवादी व्याख्या से उबी हुई हैं । अनामिका 'स्त्री-चिंतन' के परिदृश्य को समझने की नई भाषा, नई दृष्टि का आगाज़ करती हैं। उसे 'डेकोरम' में लाना चाहती हैं।

कविता के अंत में 'परमपिता' और 'परमपुरुष' से बख्श देने का जो आग्रह है वह वास्तव में पितृसत्ता के उस परमपिताओं और परमपुरुषों से आग्रह है जो 'ऑनर किलिंग', बलात्कार, ताना, फाँसी, जलाना, एसिड से हमला करना अपना परम कर्तव्य मानते हैं और अपने पौरुष को अनामिका की भाषा में 'बमपिलाठ' बन जाने से चुकते नहीं हैं।

बदलते वक्त के साथ बदलती गयी तस्वीर जमाने की ये पंक्तियाँ इस कविता पर एकदम सटीक बैठती है। आपने स्त्री जीवन के भीतर के भयावह सच को बहुत सहज ढंग से काव्यानुभूति में परिवर्तित कर एक नये रूप में, नये अर्थ के साथ आग्रह भरें स्वर में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। बहुत पहले से आप कविता को कम शब्दों में अधिक कहने की विधा मानती है। हिन्दी साहित्य में स्त्री चाहे विषय के रूप में आयी हो चाहे विषयी के रूप में उसका एक लम्बा इतिहास रहा है। गुजरी हुई शताब्दी पर परच दृष्टि डाले तो जहाँ तक प्रागैतिहासिक भारतीय समाज में नारी की

स्थिति का सवाल है, वैदिक साहित्य में व्यक्त हुई। ऐसी कई बातों से इसका अनुमान लगाया जा सकता है जो एक ओर मातृ सत्तात्मक समाज में नारियों की विकसित और गौरवमयी स्थिति का परिचय कराती है, वहीं दूसरी ओर तत्कालीन सामाजिक सम्बन्धों में नारियों की भूमिका के क्रमशः गौण होते सम्बन्धों को भी दर्शाती है। 'मनुस्मृति' इसका साक्षात प्रमाण है। वैदिक वांग्मय में सर्वाधिक प्राचीन और सर्वाधिक महत्वपूर्ण ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के 2006 मन्त्रों में से मात्र तीन मन्त्रों (दो लोपामुद्रा द्वारा और एक मात्र ऋचा रोमशा द्वारा) का नारियों द्वारा रचित होना और उसमें भी सेक्स को ही वण्र्य विषय बनाना उस काल में नारियों की दयनीय दशा का स्वतः परिचय देता है। विद्वतजन किस आधार पर वैदिक काल में नारियों के स्थान को ऊँचा घोषित करते हैं, क्योंकि ऋग्वेद के अन्य मण्डलों में भी जहाँ नारियों द्वारा ऋचाएं कही गयी है उनके विषय रति, पति प्रेम, सपत्नी सम्बन्ध आदि ही हैं। स्त्रियों के विषय में ऋग्वेद में जो विवरण प्रस्तुत है उनके अनुसार स्त्री का मन चंचल होता है। उसे नियन्त्रण में रखना असम्भव सा है। " उसकी बुद्धि भी छोटी होती है (20/2) पत्नी एक खेत के समान होती है जिसमे पुरुष अपना बोता है (21/2)। यही नहीं पारिवारिक सम्बन्धों में भी स्त्री मात्र भोग्या थी। ऋग्वेद के दसवें मण्डल के दसवें सूक्तम में सहोदय भाई-बहन यम और यमी का संवाद है। जिसमें यमी यम से सम्भोग याचना करी है वहीं अथर्ववेद (9/10/12) में प्रजापति का अपनी पुत्री के साथ सम्बन्ध (सम्भोग) का वर्णन है (22/4)। पी0बी0 कारो ने लिखा है, ''ऋग्वेद (1/109/2), मैत्रयणी संहिता (1/10/1), निरुक्त (6/9,3/4), ऋग्वेद (3/31/2), ऐतरेय ब्राह्मण (33) आदि के अवलोकन से विदित होता है कि प्राचीन काल में विवाह के लिये लड़कियों का क्रय-विक्रय होता था (1123/5) रामायण काल मी बात करे तो सीताराम की छाया की तरह अनुसरण करने वाली थी-पूर्ण समर्पिता और दूसरी तरफ राम ऐसी एकनिष्ठ पति परायणा और गर्भिणी सीता को बगैर किसी अपराध के एक सामान्य नागरिक (धोबी) का ताना सुनकर जंगल में घोखे से निर्वासित कर देते हैं। अन्याय, अत्याचार और शोषण का इससे बड़ा उदाहरण क्या होगा कि सीता को यह बताना भी जरूरी नहीं समझा कि आखिर उनका अपराध क्या है? लंका विजय के बाद भी राम ने सीता को अग्नि परीक्षा के बाद ही स्वीकार किया था। वास्तव में सीता के प्रति राम की यह कठोरता यौन नैतिकता के संदर्भ में आये कठोर सामाजिक नियमों का प्रतिफल है । आज दुनिया 'बाई वन गेट वन फ्री' की ही चल रही है। इसी जुमले को अनामिका जी ने स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में परिवार मं स्त्रियों की स्थिति से जोड़कर कुछ इस प्रकार देखती है।

''खाये ही जाती हैं

शाम से सुबह तक

खूब मिर्चीदार गालियाँ

ऊपर से थप्पड़, घूँसे, डांट,

ताने-बोनस में

बाई वन, गेट वन फ्री

और ज्यादातर तो सैम्पल मे मुफ्त बरी (बस यो हीं 32/6) ।

परिवार के लिये सर्वस्व होम करना और बदले में पुरस्कार स्वरूप गालियाँ, मारपीट मिलना ही भारतीय स्त्री का दुर्भाग्य है, शायद ''कोई यह नहीं सोचता है कि पुरुष की सफलताओं के नीचे स्त्री दबती चली गयी। हाथ में हथियार लेकर पुरुष और भी बड़ा हो गया है और भी शक्तिशाली बच्चों को सम्भालकर रखने वाला अनुचर। पुरुष ने नियम परम्पराएँ बनायीं स्त्री सिर्फ उनमें शामिल हुई। उसकी अपनी कोई परम्पर नहीं । उसके बनाये कोई नियम न ही (33/7)।

दोयम दर्जे में रह जाने की पीड़ा तथा समाज का स्त्री के प्रति उपेक्षित व्यवहार स्त्री मन को व्यथित करता है। वह अपनी स्थिति से अनभिज्ञ नहीं है और इसी को अभिव्यक्ति अनामिका की कविता में स्पष्ट नजर आती है।

‘‘पढ़ा गया हमको

जैसा पढ़ा जाता है कागज

बच्चों की फटी कापियों का

चनाजोर गरम के लिफाफे बनाने के पहले!

देखा गया हमको

जैसे कि कुफ्त हो उनींदे

देखी जाती है कलाई घड़ी

अलसुबह अलार्म बजने के बाद।

इन पंक्तियों के बारे में समीक्षक हरदयाल कहते हैं’ ‘‘स्त्री जीवन के उन अनुभवों, भावों और विचारों को व्यक्त किया गया है जो पुरुष सत्तामक समाज में पुरुषाधीन स्त्री अनुभव करती है।जैसे स्त्री अपेक्षित है और उसमें अपनी स्थिति को लेकर विद्रोह का भाव है, लड़कियों की अपनी कोई जगह नहीं है, बच्चे और पति के बीच उसका व्यक्तित्व विभक्त होने के कारण वह आत्म हत्या भी नहीं कर सकती इत्यादि(।5/8)”।

भोगा गया हमको

बहुत दूर के रिश्तेदारो के

दुःख की तरह

एक दिन हमने कहा

हम भी इंसान है

x x x

सुनो हमें अनहद की तरह

और समझो जैसे समझी जाती है

नयी नयी सीखी हुई भाषा।

नौकरी का पहला विज्ञापन के माध्यम से अनामिका जी कहना चाहती है कि जैसे ही स्त्री अपने वजूद का एहसास दिलाती हैं और नए ढंग से देखे, सुने, समझे जाने की मांग करती हो तो उसे भिन्न-भिन्न लांछनों से सुशोभित किया जाता है।

दुश्चरित्र महिलाएँ, दुश्चरित्र महिलाएँ

किन्हीं सरपरस्तों के दम पर फूली-फैली

अगरधत्त जंगली लताएँ।

खाती-पीती बेचेन, आवारा महिलाओं का ही

शगल हैं ये कहानियाँ और कविताएँ...

फिर ये उन्होंने थोड़े ही लिखी है

कनखियाँ, इशारे, फिर कनखी

के माध्यम से अपनी पहचान के प्रति भले ही आज स्त्री जागृत है, लेकिन देश की अधिकांशतः आबादी आज भी स्त्री-पुरुष सन्दर्भ के उसी प्राच्य समीकरण को ही रही हैं, स्थिति आज भी नहीं बदली है।

कविता में स्त्री की उपस्थिति के बारे में चर्चा करना कोई नयी बात नहीं है। आदि काल से लेकर आज तक की कविता में स्त्री की उपस्थिति तो दर्ज है लेकिन उसका स्वरूप भिन्न-भिन्न है, इसलिये महत्वपूर्ण प्रश्न भी यही है कि पहले की कवितायें में स्त्री की उपस्थिति किस रूप में है और आज स्वयं स्त्रियाँ लिख रही है तो उनकी उपस्थिति किस रूप में है? आदिकालीन कविता में स्त्री का चित्रण युद्ध की प्रेरक तथ्य जीतने और भोग की वस्तु के रूप में है तो वहीं भक्तिकालीन कविता में वह प्रेमिका व दैवीय रूप में नजर आती है।

कविता में स्त्री के लिहाज से रीतिकाल की बड़ी निर्मम आलोचना हुई है। रीतिकाल में स्त्री को भोग विलास और सौन्दर्य की प्रतिमा के रूप में चित्रित किया गया है। बिहारी की नायिका से लेकर घनानंद की सुजान तक में स्त्री का अपना अस्तित्व कहीं नजर नही आता है। लेकिन स्त्री का ऐसा चित्रण करने वाले सभी पुरूष रचनाकार थे।

आदिकाल में किसी स्त्री रचनाकार का पता नहीं चलता है लेकिन मध्यकाल में मीरा और अंडाल के अतिरिक्त कुछ लेखिकाओं की सूची भक्तमाल (नाभादास) में मिलती है, पर साहित्य में उनका अस्तित्व नदारद है। वही रीतिकाल में भी स्त्री लेखन सिरे से गायब है जबकि सावित्री सिन्हा ने अपने शोध (मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ) में इस काल की कवयित्रियों की लंबी सूची दी है लेकिन साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में इनका उल्लेख कहीं-कहीं 'पिलर' के तौर पर दिखाई देता है। इसलिये साहित्य में स्त्री की उपस्थिति पर विचार करते हुए साहित्य के इतिहास ग्रन्थों की पड़ताल करना और उनके मदेवादी नज़रिए को भी देखना समीचीन होगा।

बेजगह

वेद-वेदान्त से लेकर अद्यतन तक कही भी हम दृष्टिपात करें, स्त्री के प्रति हर कही दुराग्रह नजर आएगा। लोग कहते हैं कि हम बदलाव के दौर से गुजर रहे हैं। यानी हर पल हर घड़ी हमारे आस-पास कुछ न कुछ बदल रहा है लेकिन एक चीज है, जो कभी नहीं बदली और शायद न ही बदलेगी- वह है स्त्री को सिर्फ एक देह मात्र समझने की मानसिकता। सदियों से संघर्षरत नारी समाज की एक इकाई के रूप में अपनी पहचान की निर्मिति के लिए स्त्री, जिस अदम्य जिजीविषा एवं प्रबल इच्छा शक्ति का परिचय आज दे रही है, वह उसकी बौद्धिक जागृति की ही परिचायक है जो उसने धर्म, आस्था, परम्परा, मूल्य एवं व्यवस्था के प्रति प्रकट किया है। वर्तमान समय में नारी पुरूष वर्ग से प्रतिस्पर्धा न करके केवल उसके समकक्ष एक मनुष्य होने के नाते प्राप्त होने वाले अधिकारों की माँग कर रही है। वह पुरुष के अस्तित्व को न नकार कर एक सहनागरिक की तरह अपनी पहचान स्थापित करना चाह रही है। इसके लिए उसका सारा जोर अब तक प्रयुक्त मिथकों का अस्वीकार और स्वतंत्र इंसान के रूप में अपनी स्वीकृति का है। महादेवी वर्मा के शब्दों में, ''संसार के मानव समुदाय में वही व्यक्ति स्थान और सम्मान पा सकता है, वही जीवित कहा जा सकता है, जिसके हृदय और मष्तिष्क ने समुचित विकास पाया हो और जो अपने व्यक्तित्व द्वारा मनुष्य समाज से रागात्मक के अतिरिक्त बौद्धिक सम्बद्ध भी स्थपित कर सकने में समर्थ हो। एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास की सबको आवश्यकता है। कारण, बिना इसके न मनुष्य अपनी इच्छा शक्ति और संकल्प को अपना कह सकता है, और न अपने किसी कार्य को न्याय-अन्याय की तुला पर तौल सकता है(18/1) ।

अपनी जगह से गिरकर

कही के नहीं रहते

केश, औरतें और नाखून-

अन्वय करते थे किसी श्लोक का ऐसे

हमारे संस्कृत टीचर

और मारे डर के जम जाती थी

हम लड़किया

अपनी जगह पर

पंक्तियों के माध्यम से समाज में अपनी जगह की खोज और समाज द्वारा परिष्करण की प्रक्रिया इसी द्वन्द्व में स्त्री का अन्तर्जगत से उसका सम्बन्ध भी परिभाषित होता है। अनामिका इस कविता के माध्यम से निरन्तर पुरुष वर्ग की उपेक्षा सहकर समाज में अपनी स्थिति को परिभाषित करती हैं ।

राम पाठशाला जा!

राधा, खाना पका!

राम, आ बताशा खा!

राधा, झाड़ू लगा!

भैया अब सोएगा,

जाकर बिस्तर बिछा!

× × × ×

लड़किया हवा, धूप, मिट्टी होती है

उनका कोई घर नहीं होता।

पंक्तियों के माध्यम से विभिन्न स्तरों पर जाने अनजाने प्रदर्शित भी करता है। अनामिका प्राथमिक शालाओं में पढ़ाये जाने वाले गैर जनतांत्रिक पाठों को केन्द्र में रखकर समाज में हो रहे इस लिंगभेद के सत्य को उद्घाटित करती है। और सत्य यही है पितृव्यवस्था में लड़कियों को इस प्रकार के विशेष साँचे में ढ़ालने का तात्पर्य यही है कि वह बिना किसी विरोध के इन सांचों में गलती-ढ़लती रहे और पुरुष को अपने उपयुक्त स्त्री (सेविका, सांचे में ढ़ली निर्जीव मांसल वस्तु) मिलती रहे और वह अपना प्रभुत्व कायम रख सके।

जिनका कोई घर नहीं होता

उनकी होती है भला कौन सी जगह

× × × × ×

घर छूटे, दर छूटे, छूट गए लोग-बाग,

कुछ प्रश्न पीछे पड़े थे, वे भी छूटे!

छूटती गयी जग है।

अनामिका इस कविता के माध्यम से पुरुष सत्ता से लगातार प्रश्न करती है। जिसको इस पृथ्वी पर औरों से अलग देखा जाता रहा है सदियों से। बेटा-बेटी में अन्तर, लिंग भेद को मानने वाले पुरुषों पर स्त्रियों के माध्यम से प्रश्न का अम्बार लगा देती है। हिन्दी कविता में जिन रचनाकारों ने स्त्री रचनाशीलता को एक कोटि के तौर पर स्थापित किया, अनामिका उनमें अग्रणी है, ऐसा नही है कि हिन्दी में स्त्रियाँ कविताएँ नही रचती थीं, अथवा उनकी कविताओं को जगह नही मिलती है। इनकी रचनाओं में स्त्री की आवाज भी थी जो इनके समकालीनों से जुदा थी। कई दफे स्त्री रचनाकारों की रचनाओं में मुख्तलिफ स्वर भी मिलते है। इन तमाम किस्म के स्वरों का समुच्चय भी सृजनात्मकता में डूबकर आता है ।

इतिहास के जिस दौर से कवि अनामिका अपनी रचनात्मक ऊर्जा के साथ सामने आयी, उस समय तक स्त्री की रचनाशीलता को एक कैटेगरी की तरह देखने का चलन नहीं था।

परम्परा से छूटकर बस यही लगता है-

× × × × ×

जैसे

अधूरा अभंग

अनामिका 'बेजगह' के अंतिम पैराग्राफ के माध्यम से स्त्रियों के दुःख दर्द को बयां करती है। अपने को बहुत बड़े समाज का एक सुई के नोक के बराबर का अंग मानती है। समुद्र के बजाय अपने को छोटा तालाब मानती है। संघर्ष करने वाली स्त्री को अधूरा अभंग मानती है। अकादमिक हलकों का अगर दो मोटे किस्म का विभाजन करें तो कहना होगा कि समाजशास्त्र से सम्बद्ध लोग इसे दबी जुबान से सही स्वीकार करने लगे थे। परन्तु साहित्य संसार में वह हस्ति विकसित नही हो पायी थी कि स्त्री की रचनात्मकता को अलग तरीके से देखा जाये, यहाँ इशारा पुरातन पंथी ख्याल के लोगों की तरफ नहीं किया जा रहा है अपितु तरक्की पसन्दगी का दावा करने वाले लोगों को इसके दायरे में रखा जा रहा है। अपनी वैचारिक समझ को प्रगतिशील समझने वाले लोग स्त्री को वर्ग के वृत्त से बाहर नहीं देख पा रहे है। वर्ग की कैटेगरी से जुड़ने के बावजूद स्त्री की एक विभिन्न कोटि होनी चाहिए। हिन्दी साहित्य के नामवरों का ऐसा ख्याल नही बना थ। इस दौर में सक्रिय स्त्रियों पर भी इसका असर दिखता है। वे भी खुद की रचनाओं को पृथक कर देखे जाने की हिमायती नही थीं, हालांकि इनकी रचनाओं में वे चिन्ह मौजूद थे जो उन्हें रचनाकारों के सामान्य वर्ग में रहने के बावजूद एक विभिन्न कोटि का बतलाते थे। कहना न होगा कि उन चिन्हों के मूल में उनकी रचनाओं में निहित विशिष्ट स्त्री तत्व था।

<u>तुलसी का झोला</u>

'तुलसी का झोला' कविता कई समानांतर विमर्श प्रस्तुत करता है। 'तुलसी' वस्तुतः महाकवि तुलसीदास जी हैं और साथ ही सिला हुआ वह गूदड़ जिसमें रतन तुलसी की माला रखी होती है का प्रतिनिधित्व रत्ना करती हैं। यहाँ 'रतन' तुलसी में रत्नावली और तुलसीदास दोनों निबद्ध हैं। रत्नावली तुलसी से संवाद करते हुए अपने अस्तित्व की तलाश करती हैं। रत्ना के माध्यम से स्त्री-जाति संवाद करती है इतिहास और वर्तमान से ।

कविता की शुरुआत 'मैं रत्ना' से शुरू होती है जिसमें रत्ना अपने होने का उद्घोष करती है। आगे वह स्वयं को 'रतन तुलसी' कहती हैं लेकिन यह बताना नहीं भूलती कि 'रतन' हूँ मैं जरूर लेकिन, गूदड़ में सिली हुई । भारतीय मनीषा में

महिमामंडन के चलन को अनामिका तुरंत उघाड़ देती हैं । व्यक्ति से लेकर वस्तु जिसकी गौरवगाथा गानी हो, महिमामंडित करना हो उसे उच्चरित कर, निवेदित कर ऐसी जगह स्थापित कर दें जिसकी पूजा हो, यशःगान हो लेकिन वह कुछ बोले नहीं, बाहर नहीं आए। शताब्दियाँ बताती हैं कि स्त्री-जाति का महिमामंडन इसी प्रकार से किया गया है कि वह अपने खोल से बाहर नहीं निकले।

इतिहास के उस परिप्रेक्ष्य को 'रत्ना' बताना नहीं भूलती जिसमें उन्होंने लोक लाज वश अतिशय प्रेम के कारण तुलसीदास जी को डाँटा था।

रत्ना कहती है एक बार डाँटने से उन्होंने लम्बा इंतजार किया कि कोई तो आए उसे लिवाने, मनाने लेकिन कोई नहीं आया। स्त्रियाँ इस तरह की डाँट और इससे बदतर डाँट की अभ्यस्त होती हैं जैसे उनका कोई स्वाभिमान नहीं होता।

यह कविता 'जक्स्टआपोजीशन' में चलती है। एक तरफ स्वयं डाँट खाने और बर्दाश्त करने में वे पूरी स्त्री-जाति की भावना का अंकन कर जाती है। 'धन-घमंड, नभ गर्जत, घोरा पिया बिनु तड़पत मन मोरा' पंक्ति की व्याख्या नैहर के साथ मिलाकर अनामिका करती हैं। नैहर वह जगह है जहाँ चैन से कोई भी स्त्री रहना चाहती है, अपने जीवन के सारे दुख, शोक, बैचेनी को दर किनार कर अपने में डूब कर। इस थोड़े से क्षण में भी अतिशय भावावेश में तुलसी सर्प को रज्जू समझ उसे पकड़ पहुँच जाते हैं। स्त्री का फुर्सत भी उसका नहीं होता । उसका एकांत सबका हो जाता है। 'फुर्सत' की तुलना नमक से करती हैं अनामिका। जिसकी जरूरत हर स्त्री को होती है- न कम न अधिक। लेकिन यह नमक भी पति, परिवार, समाज लेना चाहता है।

नमक के बाद दूसरा बिंब साड़ी का आता है। जिसे कितना भी पटक साफ किया जाय, तार-तार हो लिपटी रहती है, अलगनी पर पड़ी रहती है। उड़ नहीं जाती । लेकिन रत्नावली को यह वियोग सहना पड़ा। वस्तुतः स्त्री जाति की यही दशा है। वे प्रश्न करती हैं कि तुम राम नाम की प्राप्ति के लिए गलियों - चौबारे में भटके लेकिन मेरी सुध-बुध नहीं रही जहाँ हमेशा तुम्हे आराम मिलता था। अनामिका बताना चाहती है कि हर स्त्री की विनय पत्रिका है परन्तु कोई उसकी विनयशीलता को नहीं पढ़ता। पुरुष अपने अहं के साथ जीते हैं। स्त्री पूरी कोशिश करती है स्नेह को परिभाषित पुनर्परिभाषित करने के लिए लेकिन पुरुष का अहंभाव उसके अंदर की अग्नि को बुझने नहीं देता।

अनामिका स्त्री की भूमिका को पुनर्परिभाषित करना चाहती है। अंशुमाली सूर्य की तरह अपने तेज को स्वयं के झोले में समेटने को कहती है क्योंकि अब उसे नया संधान करने की जरूरत है, नये संकल्प के साथ, नए पथ पर अग्रसर होना है, क्योंकि सबका सोचते हुए उसने स्वयं के लिए कभी नहीं सोचा । मनाने, अनुनय-विनय करने में सारी मेधा को उसने लगा दिया।

इतिहास से रत्नावली - तुलसीदास के इस प्रसंग को लेते हुए अनामिका मायका, नमक, साड़ी, अलगनी के माध्यम से भारतीय स्त्री के चिंतन का नया रूपक खड़ा करती हैं। आँख के आँसू का खारापन नमक की संज्ञा से अभिहित होते हुए चेहरे के नमक में निमज्जित हो बहा ले जाता है। पुरुष भक्ति का सहारा ले, लेखकीय आदर्श का सहारा ले अपनी दुनियाबी चीजों से तटस्थ हो जाते लेकिन स्त्री अनंतकाल तक उसकी अनुगामिनी बनी आदर्श के पथ का अनुसरण करती रहती। लेकिन, अंततः वह अपने झोले में अपने अस्तित्व को तलाशती है। बहुत कठिनाईयों के बाद वह कह पाती है 'आपका झोला हो आपको मुबारक ! अच्छा बाबा राम-राम'। 'अच्छा बाबा, राम-राम!' यह पंक्ति उस आवाज़ को व्यक्त करती है जिसमें 'बहुत हो गया' हम अपनी राह चलें, वाला भाव व्यंजित है।

नारी सृष्टि का नींव है, आधार है, सृष्टि की सृजन मार्गदर्शिका है एवं विस्तार का केन्द्र बिन्दु है। वह करुणा की प्रतिमूर्ति, मातृत्व की साकार प्रतिमा, सृजन एवं धैर्य की देवी है। जब तक स्त्री की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति का विकास नही होगा तब तक समाज के विकास पर प्रश्न चिह्न लगा रहेगा। कई सहस्त्राब्दियों से नारी को कुचला रौंदा जाता रहा है। प्रकृति और संस्कृति में सदैव द्वंद रहता है। जब सामाजिक व्यवस्था व्यक्तित्व को दबाने का प्रयास करती

है तब व्यवस्था में विद्रोह होता है और नयी व्यवस्था उभरने लगती है। अनामिका द्वारा रचित तुलसी का झोला कुछ इसी प्रकार की कविता है। तुलसी द्वारा रत्नावली को त्याग दिया जाता है। लेकिन करूणामयी रत्नावली तुलसी के आगे विवश और लाचार है। इसी को अनामिका कविताई में ढ़ालती है।

मैं रत्ना - कहते थे मुझको रतन तुलसी

× × × × ×

आएगा कोई, तोड़ेगा टांके गूदड़ के

ले जाएगा मुझको आके!

परित्यक्ता होने के बावजूद स्त्री के मन में विश्वास रहता है कि उसका अपना आकर उसको ले जाएगा। समय बितता जाता है परन्तु कोई नही आता है रत्नावली को लेने। हम चाहे कितना ही गार्गी अपाला, घोषा आदि का उदाहरण दे लें, पर यह सत्य है कि नारी कभी पुरुष का स्थान नही पा सकी है। क्योंकि धार्मिक आचार-विचार और नियमन पर पुरुष का ही नियन्त्रण रहा है इसलिए उन्होंने सारे अधिकार और स्वतंत्रता अपने पास रखी है जबकि सारी जिम्मेदारी स्त्री को सौंप दी। लेकिन अब यह भ्रमपाल टूटने लगा है और स्त्री अपनी सत्ता को पहचानने लगी है।

पर तुमने तो पा लिया था अब राम रतन

इस रत्ना की याद आती क्यों?

× × × × ×

तुमने तो सारा समुन्दर ही फुर्सत का

सर पर पटक डाला

अनामिका रत्नावली के माध्यम से बताती है कि पुरुष भी नारी के बिना वैसे ही अधूरा है जैसे- नारी पुरुष के बिना। अनामिका परम्परागत रूढ़ियों, मान्यताओं, आस्थाओं में न केवल स्त्री को उपस्थिति को विश्लेषित करती हैं बल्कि आधुनिक परिवेश में उसकी महत्ता और उसकी भूमिका को भी।

प्रत्येक समाज सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्विरोध होते है, जिनका प्रतिबिम्ब हमें उस समय के सांस्कृतिक जीवन में दिखाई देता है। भारतीय सन्दर्भ की बात करे तो समाज में स्त्री परतन्त्रता का यथार्थ और स्वतन्त्र्य हासिल करने की इच्छा आकांक्षा और संघर्ष जन्म अन्तर्विरोधों के मूल में सांस्कृतिक संरचनागत स्थितियाँ ही रही है।

संस्कृति नैतिकता, परम्परा और मर्यादा की सुरक्षा के नाम पर सदियों से नारी उत्पीड़ित और दमित हो रही है। धार्मिक, सांस्कृतिक मिथकों और आख्यानों में अवस्थित ईश्वरीय विधि-विधानों का वास्ता देकर स्त्रियों को नियतिवादी, अन्धविश्वासी, रूढ़िग्रस्त बना दिया गया। पितृ सत्तात्मक मूल्य व्यवस्था में घर और बाहर दोनों जगह पुरूष संरक्षण के बीच आंकी जाती रहने के कारण उसे दोयम दर्जा ही हासिल हुआ। घर के अर्थहीन, मूल्यहीन कामों में बंधी वह स्वयं को 'कमतर' देखने को आदी होती गयी। विडम्बना ही है कि उसने अपने जीवन का सारा 'तत्' अपने भीतर बैठाये गये 'सत्' से जुड़ा हुआ महसूस किया। उसकी अपनी न तो स्वतन्त्र गति थी, न ही दिशा । पति व्रत्य, यौन शुचिता, सतीत्व उसकी जीवन प्रक्रिया के नियामक तत्व बन गये और आज तक ये शब्द सामाजिक सांस्कृतिक अन्तर्विरोधों को दबाने में अहं भूमिका निभाते आ रहे है।

अपने झोले में ही!

अब निकलूँगी मैं भी।

अपने संधान में अकेली!

आपका झोला हो आपको मुबारक!

अच्छा बाबा, राम राम!

पितृ सत्तात्मक रवैयो को दरकिनार करते ही एक अनोखे सुकून का अहसास होता है, इसी क्रम में तुलसी के व्यवहार से खिन्न और आत्मविश्वास से जगी रत्नावली प्रतिज्ञाबद्ध होती है। उपर्युक्त पंक्ति इसका उदाहरण है। आत्मनिर्भर स्त्री की छवि की स्थापना के साथ ही अनामिका ने स्त्री शुचिता के पारंपरिक मिथक को कटघरे में खड़ा किया है। स्त्री का दुर्भाग्य यही है कि 'कोख से लेकर चिता तक' वह अस्तित्व हीनता में ही जीती है- एक विश्रृंखल और अस्त व्यस्त जीवन।

निष्कर्ष –

अनामिका की कविता नयी सदी के नए विमर्श की कविता है। एक स्त्री पूरी श्रृष्टि को, घर के कोने से दूर अक्षांश तक को कैसे देखती है यह अनामिका की कविता को पढ़ते हुए समझा जा सकता है।

भाषा की वह पौध जिसे लक्ष्मण-बूटी कहते हैं वह अनामिका के पास है। कहीं भी डाल दें बस मिट्टी की छुअन चाहिए वह विस्तीर्ण हो जायेगी , खिल जायेगी , खुल जायेगी 'दसबजिया फूल' की तरह टूपर-टापर , टुह- टुह लाल ।

अनामिका के कविता के विषय संपूर्ण गोलार्द्ध को समेटे हुए है। वैश्विकता के साथ निजता का समन्वय अनामिका की कविता की विशिष्ठता है । इतिहास सम्मत विवेक या विकास सम्मत समझ या स्त्री विषयक चिंतन के साथ भूमंडलीकरण की त्रासदी , उत्तर आधुनिक व्याख्या का मायाजाल अनामिका की कविअता की अलगनी पर रखे कपड़े हैं । कविता की लय 'चुटपुटिया बटन' की तरह है जो चुट से लग पुट से बंद हो जाती । कविता के घर में सूप और झाड़ू को वे जरुर रखती हैं। थोथा को उड़ाना और गन्दगी को बुहार देना उनके कव्यांगन को साफ सुथरा रखता है। जितनी आसानी से अनामिका अन्य भाषाओँ से अनुवाद कर लेती हैं उतनी सरलता से उनकी कविता का संतरण दूसरी काव्य भाषा में हो सकता है या नहीं, कहना कठिन है। भाषा के बटुए में शब्दों के संस्कार की अपर छटाएँ हैं जहाँ से वे शब्द –चित्र, शब्द–राग उकेरतीं हैं , मिथिला पेंटिंग की तरह या विद्यापति के गीत-भास की तरह ।

नव सामाजिक विमर्श के पायदान पर अनामिका अपने चिंतन का सोपान स्वयं निर्धारित करती हैं । वे कहती हैं कि "सच रेडिमेड नहीं मिलता है / सबको बुनना पड़ता है अपने अपने नाम का", तब हम उनके संघर्ष को महसूस कर पाते हैं । हाशिए पर धकेली गयी स्त्रियों की पक्षधरता में वे कहना नहीं भूलती कि "अलग पात है मेरी / अलग जात है मेरी / फिर भी समझने के लायक हूँ ।" उनकी भाषा कद्दावर इंसान की भाषा है । वे किसी के सहारे लड़ाई नहीं लड़ना चाहती । वे अपनी चिमटा , कलछुल से तथाकथित आधुनिकता के बिलाड़ को भगाना जानती हैं, " कितनी भी हो आधुनिक दुनिया / प्राचीन रहती है अभिव्यक्तियाँ ।" भाषा के कोठार से गझिन स्मृतियों के शब्द , घर –गृहस्थी की आंच में तपी अभिव्यक्तियों को अनामिका चुन लेती हैं।

'आम्रपाली' कविता में आम्रपाली के घर का रास्ता बताते हुए (ठिकियाते हुए)कहतीं हैं – मेरी ननिहाल के उत्तर । यहाँ आम्रपाली और अनामिका का ननिहाल एक स्ट्रेच पर चल पड़ता है । सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति , लिच्छवी गणराज्य की गणिका या फिर बौध भिक्षुणी आम्रपाली के लिए भाषा का मारक शब्द " खदर – बदर कर उठता है और उसके भीतर का हहाता सत सूखती टटाती हुई हड्डियों में तब्दील हो जाता है । काव्य भाषा के सत को लेखिका निचोड़ लेती है, थोथे को उड़ा देती है ।

'दंडकारण्य' कविता में वे जनजातीय जीवन की पक्षधर बनकर चाहती हैं कि दण्डयायन आये और अपनी ठस आवाज से सिकंदररुपी बहुराष्ट्रीय कंपनियों से पूछे , " सामने से हट जाओ / तुम बाधित कर रहे हो धूप का रास्ता" में भाषा की मिल्कियत का बोध भाषित हो उठता है ।

अनामिका के कविता के बिंब भारत की उन महिलाओं के बिंब हैं जो अति साधारण जीवनयापन करने वाली हैं । उन्हें समझने के लिए भारत के खेत खलिहान में काम करनेवाली, झोपड़पट्टी में रहने वाली महिलाओं के जीवन को समझाना होगा। पश्चिम के मानक पर स्वतंत्रता की बातें , यहाँ बेमानी साबित हो उठती हैं । साथ ही ऐसी भाषा स्त्री की चेतना का ही हिस्सा हो सकती है, पुरुष के यह अनजानी भाषा का देस्ग है ।

' ब्लाउज़ ' के हुक और फंदा के बरक्स जीवन का संस्पर्श देखा जा सकता है । 'जुएँ' चुन रही सखियों में घर के खटराग को देख पाना स्त्री दृष्टि की गहनता है । 'मेरा ब्लाउज़, मेरे बच्चे का गुल्लक है', यह माँ –भाषा का कमाल अनामिका ही लिख सकती हैं ।

नायिका भेद के रसशास्त्र को दरकिनार करते हुए आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल की चारदीवारी को फलाँगते हुए तकनीक से जूझती, चीन की बांस की तरह धरती की छाती से दरक कर निकल सकने के साहस के साथ 'भाषा के शून्य महल' को अपनी निर्मितियों से गुलज़ार करने की कला अनामिका जानती हैं इसलिए उनकी कविता हिंदी कविता की अमराइयों को नये सौरभ से भर देती हैं । कुल मिला कर पाठक और श्रोता के लिए अनामिका की कविता नये परिप्रेक्ष्य में नव विमर्श को व्याख्यायित करती है ।

अनामिका की कविता में कविता के सरोकार, स्त्री दृष्टि एवं रचना संसार का विस्तार उन्हें अपने समय की सजग संवेदनशील कवयित्री के रूप में प्रतिष्ठित करता है। वे जुझारू नारीवादी नही हैं। लेकिन भारतीय नारी के दुःखों, यातनाओं और संघर्ष को सही परिप्रेक्ष्य में समझने-समझाने वाली स्त्री विमर्शकार अवश्य है। वे अपने समाज और संस्कृति को आलोचनात्मक ढंग से जाँच पड़ताल कर उसके सकारात्मक पक्षों और स्त्री भूमिका की पहचान के लिए, स्पेस बनाने के लिए संघर्षशील है। अनामिका के लिए नारी मुक्ति कभी परिवार से मुक्ति न रही है।

बदलते परिवेश, टूटते मूल्य और विखंडित होते संयुक्त परिवार, अकेलेपन का संत्रास, स्त्री-स्त्री पुरुष के संबंधों में आयी ठंडक की अनामिका ने अपनी कविता में बखूबी चित्रित किया है।

अनामिका की कविता के कैनवास के केन्द्र में स्त्री अपने अनेक रूप और रंग में विद्यमान है। महानगर और जनपद, बुद्धिजीवी और श्रमजीवी, बालक और वृद्ध, परिवार और समाज तक उसकी संवेदना का विस्तार है। भद्र समाज और लोक संस्कृति तक फैली संवेदना उन विसंगतियों को भी देख लेती है- जिसे मोहवश नजर अन्दाज कर दिया जाता है। प्रखर इतिहास बोध के कारण समय पर उनकी सजग दृष्टि है। उपेक्षित मानवीयता और उसकी विवशता भी उनकी कविताओं में प्रकट होती है। अनामिका की विशिष्टता यही है कि वह खुली आँखो से सामाजिक दृश्यों का सामना करती हैं लेकिन वे दृश्य उनके निजी आभ्यंतर संदर्भ में ढ़लकर आते हैं। जिस अर्थ में 'व्यक्तिगत ही राजनीतिक' होता है, उसी अर्थ में अनामिका का काव्य संसार 'व्यक्तिगत ही सामाजिक' है। यह एक संयोग नही परिघटना है। उनकी कविताएँ समाज में स्त्री की दशा का साक्षात्कार कराती है। वे सामाजिक सत्य का आभास भी कराती है और कवयित्री के व्यक्तिगत सत्य का अहसास भी कराती है।

<u>अभ्यास प्रश्न -</u>

1. अनामिका द्वारा रचित कविता 'स्त्रियां' का मूल स्वर क्या है?
2. स्त्रियाँ कविता का 500 शब्दों में व्याख्या कीजिए?
3. बेजगह और तुलसी का झोला नामक कविता में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

4. ‘अनामिका स्त्रियों की पक्षधर है’ स्पष्ट कीजिये?
5. आधुनिक काल के कविताओं की विशेषता बताइये?
6. अनामिका के कविता संबंधी अवधारणा को व्यक्त कीजिये?
7. बेजगह कविता पर 500 शब्दों में प्रकाश डालिए?

सहायक पुस्तक सूची

- अनामिका, बेजगह, खुरदरी हथेलियाँ
- अनामिका, पतिव्रता, खुरदुरी हथेलियाँ
- प्रभा खेतान, स्त्री उपेक्षिता
- क्षमा शर्मा, स्त्रीत्ववादी विमर्श- समाज और साहित्य
- हरदयाल, स्त्री का काव्य-जगत-समीक्षा
- अनामिका - पचास कविताएँ, नयी सदी के लिए चयन